"कृष्ण-काव्य-धारा में सूर का स्थान"

मध्यकालीन हिन्दी साहित्य में जो स्थान ज्ञानाश्रयी शाखा में कबीरदास का, प्रेमाश्रयी शाखा में मलिक मुहम्मद जायसी का तथा रामाश्रयी शाखा में तुलसीदास का है, वही स्थान सूरदास का कृष्णाश्रयी शाखा में है। हिन्दी साहित्य के अन्तर्गत कृष्ण-काव्य-धारा को प्रवाहित करने का श्रेय मैथिल कोकिल विद्यापति को प्राप्त है। परन्तु विद्यापति ने जिस माधुर्य भावमयी रागात्मक कृष्ण-काव्य-धारा का आरम्भ किया है, उस पर 'गीतगोविन्द' के रचनाकार जयदेव का प्रभाव देखने को मिलता है। इसमें कोई सन्देह नहीं कि जयदेव के कृष्ण-प्रेम-संगीत ने हिन्दी के कृष्ण-काव्य-धारा को प्रेरणा प्रदान की तथा इसी को आधार बनाकर मैथिल कोकिल विद्यापति ने कृष्ण सम्बन्धी अपने गीतों का प्रणयन किया, फिर भी हिन्दी साहित्य के क्षेत्र में कृष्ण-काव्य के प्रथम प्रणेता विद्यापति को ही माना जा सकता है, क्योंकि जयदेव का काव्य संस्कृत साहित्य की वस्तु है और उसे संस्कृत तथा हिन्दी के बीच का सेतु माना जा सकता है, किन्तु जयदेव को हिन्दी साहित्य के कृष्ण-काव्य का आदि कवि कहना उचित नहीं है। विद्यापति से ही हिन्दी में कृष्ण-काव्य का शुभारम्भ होता है और विद्यापति के बाद हिन्दी में कृष्ण-काव्य-धारा को भारत-व्यापी बनाने का श्रेय सूरदास को प्राप्त है। वैसे देखा जाय तो विद्यापति और सूरदास के बीच में भी कोई शृंखला दिखाई नहीं देती, क्योंकि विद्यापति ने मैथिल भाषा में श्रीकृष्ण की प्रेममयी माधुर्य भावना अपने गीतों में सँजोया है और सूरदास ने ब्रजभाषा के

अन्तर्गत भक्ति-भावना से युक्त इस प्रेम-तत्व का गान किया है। इसलिए हिन्दी के ज्यादातर विद्वानों का मानना है कि सूरदास मैथिल कोकिल विद्यापति की परम्परा में न आकर ब्रज के उन तमाम लोक-गीतकारों की परम्परा में आते हैं जिनके नाम विस्मृत हो चुके हैं, किन्तु जिनके गीत सूर से पहले भी ब्रज-प्रदेश के हर घर में मिलते हैं तथा जो गीत कृष्ण की भक्ति-भावना से भी परिपूर्ण हैं। आचार्य रामचन्द्र शुक्ल इस बात का समर्थन करते हुए लिखते हैं- "सूरसागर किसी चली आती हुई गीति-काव्य-परम्परा का—चाहे वह मौखिक ही रही हो— पूर्ण विकास-सा प्रतीत होता है।"

सूरदास के काव्य में भक्ति और वात्सल्य की प्रधानता है। जिस तरह से सूरदास का वात्सल्य वर्णन पूर्णता को छूता है वैसा किसी अन्य कवि का नहीं। उनका शृंगार वर्णन अपनी व्यापकता में अद्वितीय है। सूर ने शृंगार के दोनों पक्षों - संयोग एवं वियोग का स्वाभाविकता के साथ मार्मिक चित्रण किया है। उनका शृंगार वर्णन जीवन की सजीवता तथा पूर्णता की अभिव्यक्ति करता है। चिन्तन के क्षेत्र में कृष्णाश्रयी शाखा के कवियों सगुण भक्ति का मंडन तथा निर्गुण का खण्डन किया है। इस क्षेत्र में सूरदास ने 'भ्रमरगीत' लिखकर जो सीमारेखा बनायी है आज तक कोई भी कवि उससे आगे नहीं बढ़ सका है। भाषा के क्षेत्र में सूरदास ने ब्रजभाषा की कोमलकान्त पदावली को गेय गीतों में उपस्थित किया है। सूर के गेय पदों में हृदयस्पर्शी भावों की बड़ी ही सुन्दर अभिव्यक्ति हुई है।

सूरदास के बाद हिन्दी में कृष्ण-काव्य की एक सुदीर्घ परम्परा लिखित रूप में देखने को मिलती है, जिसमें सूर के अनुकरण पर ही

शृंगार और वात्सल्य से परिपूर्ण मधुर गीत गाए गए हैं जिन्हें सूर का जूठन कहा जा सकता है, इसमें कोई अत्युक्ति नहीं है। इस परम्परा में अष्टछाप के वे कवि आते हैं जिन पर वल्लभाचार्य एवं गोस्वामी विट्ठलदास की विशेष कृपा थी, जो इन दोनों आचार्यों के आग्रह एवं अनुरोध पर विभिन्न राग-रागनियों में कृष्ण-भक्ति सम्बन्धी गीतों का प्रणयन किया करते थे। इनमें सूरदास के अतिरिक्त कुम्भनदास, परमानन्ददास, कृष्णदास, गोविन्द स्वामी, नन्ददास, छीतस्वामी तथा चतुर्भुज दास प्रसिद्ध हैं। ये सभी कवि ब्रजभाषा के अन्तर्गत कृष्ण-काव्य के प्रणेता माने जाते हैं क्योंकि इनके गीत हिन्दी-साहित्य के अनुपम निधि हैं तथा इनमें कृष्ण भक्ति के अतिरिक्त ब्रज-संस्कृति भी साकार रूप में विद्यमान है। अष्टछाप के कवियों के उपरान्त कृष्ण-काव्य-धारा में मीराबाई का विशेष महत्व है जिन्होंने दाम्पत्य भाव में विभोर होकर कृष्ण-भक्ति सम्बन्धी मधुर एवं मर्मस्पर्शी गीतों की रचना की है जिनमें वियोग एवं संयोग शृंगार सजीव हो उठा है। मीराबाई के उपरान्त कृष्ण-काव्य-धारा में क्रमशः नरोत्तमदास, हरिराय, गोविन्ददास, स्वामी हरिदास तथा हितहरिवंश आते हैं। इनमें से हितहरिवंश के पद अधिक प्रसिद्ध एवं महत्वपूर्ण हैं। इनके बाद कृष्ण-काव्य-धारा में श्री भट्ट, व्यास जी, निपट निरंजन लक्ष्मीनारायण, बलभद्र मिश्र, कादिर मुबारक, रसखान आदि कवि आते हैं। इनमें से रसखान अधिक प्रसिद्ध हैं, जिनके 'प्रेमवाटिका' तथा 'सुजान रसखान' में उत्कट प्रेम एवं भावानुभूति के साथ कृष्ण-भक्ति मानो साकार हो उठी है। इसके पश्चात अहमद, ध्रुवदास, सुन्दरदास, चतुरदास, घनदास, रसिकदास, रहीम आदि कृष्ण-काव्य-धारा के कवि मिलते हैं।

जिनमें रहीम का स्थान महत्त्वपूर्ण है। इसके उपरान्त बीरबल, टोडरमल, कवि गंग आदि आते हैं। जिनकी गणना भक्तिकाल में की जाती है तथा जो कृष्ण-काव्य-धारा के कवि माने जाते हैं। भक्तिकाल के इन सभी कवियों की रचनाओं पर सूरदास का प्रभाव स्पष्ट रूप से दिखाई देता है तथा सूर की ही भाँति अधिकांश कवियों ने कृष्ण के बाल एवं किशोर रूप पर मुग्ध होकर अपनी रचनाएँ प्रस्तुत की हैं।

कृष्ण-काव्य का अध्ययन करने पर ज्ञात होता है कि इस धारा के प्रवर्तक सूरदास के काव्य में माधुर्य एवं सौन्दर्य के साथ भक्ति-भावना का जो आकर्षक रूप विद्यमान है, वैसा अन्यत्र देखने को नहीं मिलता। सूर ने कृष्ण की जन्मभूमि ब्रज, यमुना, मधुबन, कदम्ब, वृन्दावन आदि के प्रति जो श्रद्धा अपनात की है तथा कृष्ण के रूप-सौन्दर्य में जो आकर्षण उत्पन्न किया है, वैसा अन्य कोई दूसरा कवि नहीं कर सकता है। अन्य सभी कृष्ण-काव्य-परम्परा के कवि सूरदास के ऋणी जान पड़ते हैं क्योंकि अपनी सरस राग-रागनियों में कृष्ण की लीला माधुरी, क्रीड़ा माधुरी, वेणु माधुरी तथा रूप माधुरी का वर्णन करते हुए सूर ने अपने गीतों द्वारा एक अद्भुत आध्यात्मिक वातावरण की सृष्टि की है तथा कृष्ण के अत्यन्त मधुर एवं सौन्दर्य सम्पन्न आकर्षक रूप को जनता के सामने रखा है, जिससे अधिकांश व्यक्ति आकृष्ट होकर कृष्ण-भक्ति में लीन हुए हैं।

अतः सारांश स्वरूप यह कहा जा सकता है कि सूरदास कृष्ण-काव्य-धारा के मुख्य प्रवर्तक हैं तथा सूर ही वास्तव में हिन्दी की कृष्ण-काव्य-धारा के वास्तविक प्रतिनिधि कवि हैं।